पाठशाला
भीतर और बाहर
पाठकों के विचार

गाँव, नदी और कठपुतली का इतिहास, रुबीना ख़ान व महेश झरबड़े, अंक 15

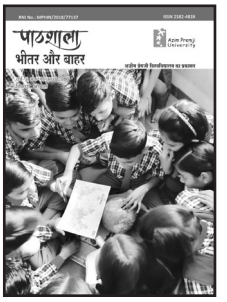

इस लेख को पढ़ते हुए मैं अपनी इतिहास की कक्षा में चली गई, ऐसी कक्षा जो विषय की रोचकता को बोझ में तब्दील कर देती थी। लेख में बातचीत और खोजबीन के ज़रिए इतिहास को खँगालने पर काम किया गया है, यह छात्रों के लिए न सिर्फ़ दिलचस्प रहा बल्कि उन्होंने इसके माध्यम से अपने गाँव और परिवेश की उन कई चीज़ों को भी जाना जिनसे वो अभी तक अनजान थे। लेख इशारा करता है कि समाज और समुदाय की भागीदारी शिक्षा में अहम भूमिका अदा करती है जिसे अकसर ही नज़रअन्दाज़ कर दिया जाता है। लेख शिक्षकों को कक्षा में इतिहास जैसे विषयों को उचित व नवीन गतिविधियों के माध्यम से पढ़ाने का सन्देश भी देता है, जिससे छात्रों में विषय के प्रति रुझान पैदा हो और वे स्वयं ही विषय के बारे में जानकारी एकत्रित कर कक्षा में साझा कर सकें।

प्रियंका रस्तोगी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, चम्पावत, उत्तराखंड

इतिहास महज़ अतीत में हुई घटनाओं को तथ्यों और तारीख़ों के रूप में रटने का नाम नहीं है। यह विषय जीवन जीने और उसके विभिन्न पहलुओं को समझने एवं आगामी समय में निर्णय लेने के लिए एक दृष्टिकोण पैदा करता है। इन्हीं बातों को केन्द्र में रखते हुए लेखकद्वय ने यह लेख लिखा है। लेख शिक्षकों में यह दृष्टिकोण पैदा करता है कि इतिहास को कैसे बच्चों के परिवेश से जोड़कर और रोचकता के साथ पढ़ाया जा सकता है। लेख को स्वरूप देने के लिए मध्य प्रदेश के तीन ज़िलों के एक-एक गाँव के विद्यालय के बच्चों के साथ कार्य किया गया। इस पूरी क़वायद में बच्चे कहते हैं कि हमने कभी सोचा नहीं था कि हमारी नदी, समाज, गाँव और संस्कृति का इतिहास इतना रोचक है। इस प्रकार की गतिविधियाँ स्थानीय इतिहास को जानने का अवसर प्रदान करने के साथ-साथ समुदाय और विद्यालय के बीच एक पुल का कार्य करती हैं, और इतिहास विषय की रटने वाली छवि को तोड़ती हैं।

देवेंद्र कुमार, उकरीद, सोसो, रामगढ़, झारखंड

दहलीज़ से बाहर सामाजिक विज्ञान का संसार, अनिल सिंह, अंक 15

सामाजिक विज्ञान की कार्यशाला और प्रयोगशाला समाज ही है, इसीलिए परिवेश के ज्ञान से कक्षा के ज्ञान को जोड़ने से ही सामाजिक विज्ञान की सार्थकता सिद्ध होती है। लेखक ने इस आलेख में 'गोपाल की दूध डेयरी', 'स्कूल सरकार का गठन', 'एक नहर के बहाने' और 'इतिहास के आईने में' उप-शीर्षकों के माध्यम से सामाजिक विज्ञान अध्ययन के अनुभवों का वर्णन किया है।

गोपाल की दूध डेयरी के माध्यम से निम्न आय वर्ग के बच्चों की शिक्षा के साथ-साथ घरेलू काम में हाथ बँटाने और उसके अनुभव से स्कूल के बच्चों के परिचित होने में मदद भी मिली। डेयरी का भ्रमण कर तय प्रारूप व प्रश्नावली के माध्यम से डेयरी व्यवसाय की जानकारी हासिल की गई। इस बात का भी पता चला कि परिस्थितियों के चलते गाँव से शहर आकर पुश्तैनी डेयरी व्यवसाय को अपनाने में पशुओं की परवरिश के अलावा पुलिस व नगर निगम के कर्मचारियों द्वारा वसूली के यथार्थ का सामना भी गोपाल के पिता को करना पड़ता है। बच्चों ने दूध उत्पादन, खपत, लागत, बिक्री मूल्य, व्यवसाय की प्रतिद्वन्द्विता, मवेशियों की देखभाल के साथ-साथ दूध के भण्डारण व विपणन के तौर-तरीक़ों की जानकारी भी ली। इस प्रक्रिया में बच्चे प्रश्न निर्माण, साक्षात्कार, बातचीत, आँकड़ों को एकत्र करने, उनका विश्लेषण कर निष्कर्ष निकालने की निगमनात्मक विधि से सामाजिक विज्ञान के वैज्ञानिक अध्ययन को साकार कर रहे थे।

दूसरी गतिविधि स्कूल सरकार का गठन के माध्यम से स्कूल सरकार के चुनाव को बच्चों द्वारा ही सम्पादित कराया गया। इस प्रक्रिया में बच्चों ने उम्मीदवारों के नामांकन, मतदाता सूची, मतदान, मतगणना व चुनाव परिणाम की घोषणा के साथ ही निर्वाचन आयोग और मतदान अधिकारी की भूमिका का प्रत्यक्ष ज्ञान अर्जित किया।

लोकतंत्र के इस निचले स्तर के संचालन अनुभव को बच्चों ने स्कूल मॉनिटर व विद्यालय प्रबन्ध समिति के चुनाव के माध्यम से विद्यालय सरकार का गठन कर सरकार के गठन, कार्य और औचित्य को जाना। इससे बच्चे राजनीति विज्ञान के एक आधार 'सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार' के सिद्धान्त व औचित्य को बख़ूबी समझे।

एक नहर भ्रमण के बहाने बच्चों ने कृषि अर्थव्यवस्था के तौर-तरीक़ों, समस्याओं, नहर के स्रोत, निर्माण एजेंसी, रबी व ख़रीफ़ की फ़सल के समय के साथ यह भी जाना कि मौसमी नहरें दिसम्बर से फरवरी तक ही चलती हैं। उन्हें मालूम हुआ कि नहर का स्वामित्व सिंचाई विभाग के पास होता है और सिंचाई का ख़र्च अलग से नहीं लिया जाता। वह किसान से लिए जाने वाले सालाना शुल्क में ही शामिल होता है।

अर्थव्यवस्था, राजनीति और भूगोल के बाद बारी थी इतिहास के आईने से जानकारी लेने की। इसके लिए भोपाल शहर के कमलापति भवन, गौहर महल, ताजुल मसाजिद, सदर मंज़िल, गोल महल, आदि भवनों का भ्रमण किया गया। इस दौरान, गाइड से इनकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, महत्त्व, निर्माणकर्ता आदि की जानकारी तो मिली ही, साथ ही संग्रहालय की मूर्तियों, सिक्कों, इमारतों, तस्वीरों, पोशाक, हथियार, फ़र्नीचर आदि के माध्यम से तत्कालीन समाज की जानकारी भी हासिल की।

गोविन्द सिंह मिराल, राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय लखनाड़ी, ताकुला ब्लॉक, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

बच्चों ने बनाया अपनी कक्षा के संविधान का संकल्प प्रस्ताव, केवल आनन्द कांडपाल, अंक 15

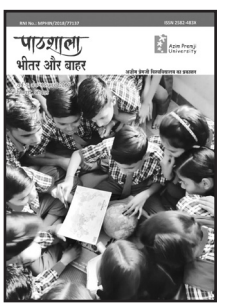

पाठशाला भीतर और बाहर का हर अंक ख़ास व पठनीय होता है। इस अंक में संविधान की प्रस्तावना, संकल्पना, उद्देशिका को लेखक ने कक्षा में बहुत रुचिकर तरीक़े से प्रस्तुत किया है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात बच्चों ने यह रखी कि अध्यापक बच्चों का मज़ाक़ न बनाएँ। सभी छात्रों को सीखने और अपनी बात रखने का समान अवसर मिले। यहाँ बच्चों में न सिर्फ़ संविधान की समझ बनी, बल्कि उन्हें अपनी बात रखने का अवसर भी मिला।

इसी अंक में, अमन मदान ने अपने लेख 'चरित्र निर्माण : किशोरों की विरोधों से निपटने की संस्कृति' में एक ऐसे मुद्दे पर बात की है जो हमारे सामाजिक ढाँचे का एक महत्त्वपूर्ण स्तम्भ है। लेखक ने जिन बच्चों से बात की, उनमें क्षेत्रीयता झलक रही है। यह भी स्पष्ट है कि अधिकांश समय हम अपने बड़े होने का हवाला देकर बालकों-किशोरों से डाँटकर या मारकर समर्पण करवाने का प्रयास करते हैं, और सामान्यतः यह स्वीकार्य भी होता है। लेकिन लेखक ने यहाँ बड़े ही व्यवस्थित तरीक़े से 'संवाद' करने की अहमियत को उजागर किया है। शिक्षण के दौरान भी संवाद करना एक महत्त्वपूर्ण शिक्षण विधि है। लेख में इस बात को भी स्पष्ट किया गया है कि इन्हीं किशोरों को भविष्य में ऐसे वातावरण में सामंजस्य बिठाना होगा जहाँ की संस्कृति और मान्यताएँ विविधता से भरी होंगी और वहाँ विवशता, समर्पण या किसी और की मध्यस्थता से अपने मतभेद सुलझाने की बजाय संवाद का तरीक़ा सबसे ज़्यादा कारगर होगा। एक अध्यापक होने के नाते, हमें अपने छात्रों में दूसरों को सुनने का धैर्य और सही का चुनाव करने की योग्यता विकसित करनी चाहिए। इस लेख को पढ़कर मुझे भी विरोध के अवसर पर अपने व्यवहार की समीक्षा करने का अवसर मिला।

'साक्षात्कार' में दीपक राय एवं पूनम भाटिया की बातचीत बहुत ही सारगर्भित एवं प्रेरक है। पूनमजी की कार्यशैली विचारणीय है। साक्षात्कार के ज़रिए मैं जान पाई कि एक छोटी-सी पहल एक बड़े बदलाव का ज़रिया होती है। बीज से वृक्ष तुरन्त नहीं बन जाता, अंकुरण से लेकर वृक्ष बनने की एक लम्बी प्रक्रिया है। पूनमजी द्वारा कोविड काल के दौरान किए गए प्रयास हों या बच्चों में पुस्तकें पढ़ने की अलख जगाना, ये प्रेरक प्रयास हैं। साक्षात्कार को पढ़कर शिक्षण में नवाचार और सदैव सीखने की तत्परता की प्रेरणा मुझे मिली।

सीमेश जैन, अध्यापिका, सीनियर सेकेंडरी स्कूल, मुहाना, जयपुर, राजस्थान

पढ़ना, अक्षर–मात्रा से आगे..., मीनू पालीवाल, अंक 15

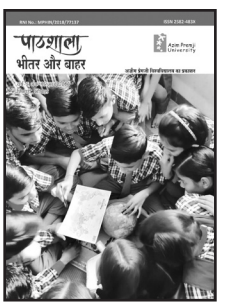

इस आलेख में पढ़ने के कौशल का महत्त्व बड़ी सहजता से ऐसे दर्शाया गया है, मानो हमारे कक्षा-कक्ष की बातों का ही सजीव चित्रण हो रहा हो।

बच्चों में पढ़ने का ज्ञान बढ़ाने के साथ-साथ बच्चों में पढ़े गए विषय की समझ बनाना शिक्षक और अभिभावक का उद्देश्य होता है। पर होता यह है कि शिक्षक अपनी विषयवस्तु तक बच्चों को सीमित कर देते हैं और अभिभावक रटन्त विद्या का सहारा लेते हैं। इसलिए पढ़ने की समझ और उसका अवलोकन कहीं खो जाता है। बच्चों से उन मूल्यों पर, जो उन्होंने पढ़कर प्राप्त किए हैं, बात नहीं हो पाती है। समझ में आया कि बच्चे पढ़ते रहें और समझ के साथ पढ़ते रहें, यही भाषा शिक्षा का उद्देश्य है।

आरती बहुगुणा, राजकीय प्राथमिक विद्यालय मरगाँव, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड

प्राथमिक कक्षाओं में आने वाले बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाना हमेशा से चुनौतीपूर्ण रहा है। मीनू पालीवाल के लेख की बातें प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने का प्रयास कर रहे शिक्षकों को सोचने-समझने और अपने अनुभवों के प्रकाश में आगे बढ़ने को प्रेरित करती हैं। शिक्षा के क्षेत्र में काम कर रहे लोग जानते हैं कि बच्चों के पढ़ना सीखने में अक्षर-मात्राओं का सीखना और पहचानना तो ज़रूरी है ही, साथ में परिवेशीय सन्दर्भ का होना भी ज़रूरी है जिससे बच्चे का जुड़ाव बन सके और वह सरलता से पढ़ने की ओर बढ़ सके। सुनने और बोलने जैसी प्रारम्भिक दक्षताओं का शुरुआती पढ़ने-लिखने में महत्त्वपूर्ण योगदान होता है।

कई बार देखने में आता है कि बच्चा शब्द में आने वाली ध्वनियों को अलग-अलग पहचान और बोल तो लेता है, किन्तु एक साथ उच्चारण करते हुए पूरा शब्द नहीं बोल पाता। इससे उसे न केवल धाराप्रवाह पढ़ पाने में समस्या आती है, बल्कि खण्ड-खण्ड पढ़ने से वह अर्थ निर्माण भी नहीं कर पाता। अर्थ निर्माण न हो पाने से पढ़ पाने का उद्देश्य ही लगभग असफल हो जाता है।

अशोक मिश्र, सदस्य, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, देहरादून, उत्तराखंड

बच्चों का लेखन पोर्टफ़ोलियो : एक विश्लेषण, कमलेश चंद्र जोशी, अंक 15

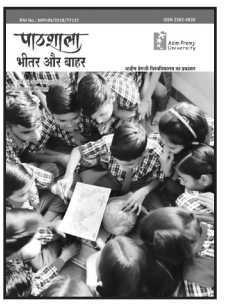

यह लेख बच्चों के शुरुआती लेखन और कुछ सायास प्रयासों के बाद उनके लेखन में आए फ़र्क़ को बारीक़ी से देखने का नज़रिया देता है। बच्चे के लिखे हुए को कैसे देखा जाए, इसके कुछ संकेतक भी समझ आते हैं। मसलन, बच्चे के लेखन में विषयवस्तु, विचारों की स्पष्टता, मौलिकता, निरन्तरता को देखने की ज़रूरत है, बजाय वर्तनी, व्याकरण आदि को महत्त्वपूर्ण मानने के। लिखने के साथ ज़रूरी है कि बच्चों को पढ़ने के मौक़े मिलें और कक्षा में पढ़े या लिखे हुए पर उनसे बातचीत बच्चों के लिखने को दिशा देती है। यहाँ ये बात महत्त्वपूर्ण है कि भाषा के सभी कौशल एक दूसरे से जुड़े हैं और उनपर समग्रता में काम से वे एक दूसरे को समृद्ध करते हैं। इसलिए बच्चों को पढ़ने, बातचीत करने और लिखने के लगातार मौक़े देने की योजना के साथ आगे बढ़ने की ज़रूरत है।

मुकेश चंद शर्मा, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ऊधम सिंह नगर, उत्तराखंड

चरित्र निर्माण : किशोरों की विरोधों से निपटने की संस्कृति, अमन मदान, अंक 15

इस लेख को पढ़कर कई नए विचार, शैक्षिक तरीक़े और संसाधन पता चले। लेख शान्ति की शिक्षा और दूसरों को प्रेम भाव से देखने पर काम करने के लिए 'कॉन्फ़्लिक्ट रेसोल्यूशन एजुकेशन' की ओर ध्यान दिलाता है। लेख में इससे सम्बन्धित ऑनलाइन सामग्री का भी उल्लेख किया गया है। लेखक द्वारा अपने दो साथियों के साथ मिलकर किए गए एक शोध पर आधारित यह लेख किशोरों के साथ संवाद संस्कृति की शुरुआत करने के तरीक़े की एक झलक देता है। परिवार और समाज में बढ़ते जा रहे झगड़ों से निपटने की तैयारी करने में इस तरह के लेख शिक्षकों और शिक्षक प्रशिक्षकों के लिए मददगार हो सकते हैं।

लेख से पता चला कि बच्चों को उनकी समझ साझा करने के लिए प्रेरित करना हो तो उनके सामने किस तरह के काल्पनिक प्रसंग रखे जा सकते हैं और इनके आधार पर कैसे प्रश्न पूछे जा सकते हैं। लेख में कहा गया है कि विरोधों से निपटने के मुख्य रूप से वे ही तरीक़े सामने आए जो संस्कृति ने उन्हें सिखाए हैं। जैसे– डाँटकर बात करना, विवश करना, झुकना, तीसरे पक्ष से सलाह या हल लेना, आदि। लेख ने इस ओर भी ध्यान दिलाया कि नैतिक सिद्धान्तों पर मनन करने का काम भारतीय संस्कृति में मुख्य रूप से पुरुषों की बैठकों में सामूहिक समझ से होता है और इसमें महिलाओं की समझ को महत्त्व नहीं दिया जाता है। वैश्विक औद्योगिक और तकनीकी समाज में विरोध के मुद्दे दिन-ब-दिन जटिल होते जा रहे हैं, यही वजह है कि इन्हें सुलझाने में पारम्परिक तरीक़े कारगर नहीं होंगे। एक पाठक के रूप में मेरी अपेक्षा है कि लेख का अगला हिस्सा भी प्रकाशित किया जाए जिसमें नई चुनौतियों से निपटने के तरीक़ों और महिलाओं के नज़रियों को शामिल करने के तरीक़े सुझाए जाएँ।

हिमांशु खोले, रिसोर्स पर्सन, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई, सागर, मध्य प्रदेश

यह लेख एक महत्त्वपूर्ण विषय पर समझ बनाने के लिए एक अच्छा दस्तावेज़ है। इस लेख में लेखक संवाद करने की क़ाबिलियत की तरफ़ ले जाने के पहलुओं पर सोचने का मौक़ा भी देते हैं।

यहाँ संवाद को लेकर अमन ने जो बातें रखी हैं, उनका सामना हम सब अपने जीवन में करते ही रहते हैं। कुछ बच्चे यह भी कह रहे थे कि समझा-बुझाकर दूसरे पक्ष को मना लेंगे। पर यहाँ लेखक का यही तर्क है कि रूठकर बात मनानी हो या समझाकर, सवाल ये है कि वहाँ संवाद की गुंजाइश कितनी थी और कितना व किस तरह का संवाद किसी भी मुद्दे के दौरान हुआ। लेखक यह भी सुझाते हैं कि जब वे बच्चे इस छोटे समूह से अधिक जटिल समाज में जाएँगे तो किसी को बुलाकर निर्णय लेने की जगह उन्हें ख़ुद निर्णय लेने की ओर बढ़ना होगा।

एक जगह लेखक यह भी कहते हैं कि संवाद में तब भी दिक़्क़त होती है जब हम सत्ता में एक दूसरे से भिन्न होते हैं। ये हमें स्कूल, कॉलेज या कार्यालयों में भी सहजता से देखने को मिल जाता है।

लेखक बताते हैं कि तनाव, विरोध, संघर्ष और टकराव हर जगह हैं, इसलिए हर इंसान और नागरिक को यह सीखना ज़रूरी है कि उनसे अच्छी तरह कैसे निपटा जाए। अन्त में वे एक ज़रूरी बात कहते हैं, "भारतीय परम्पराओं में शान्ति की शिक्षा और दूसरों को प्रेम भाव से देखने पर बहुत काम है। यूनाइटेड नेशन्स और विभिन्न शैक्षणिक संस्थानों ने भी इसपर सामग्री ऑनलाइन डाल रखी है जिसे 'conflict resolution education' के नाम से ढूँढ़ा जा सकता है। इस सामग्री को भारतीय परिवेश के अनुकूल बनाकर प्रयोग करने की सख़्त ज़रूरत है।" वे टकराव और विरोधों से सही तरीक़े से निपटने के लिए युवाओं को तैयार करने और बदलती परिस्थितियों के अनुकूल तरीक़ों पर समझ बनाने और सिखाने को आज की स्कूली शिक्षा का धर्म बताते हैं।

मोहम्मद ज़फ़र, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, उत्तरकाशी, उत्तराखंड

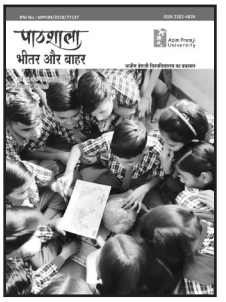

यह लेख काफ़ी समसामयिक है, क्योंकि आज के समय में युवाओं में विरोध से निपटने में आक्रामकता और दूसरे के विचारों को ख़ारिज करना काफ़ी बढ़ गया है। किसी विरोध को कैसे हल करें, इसपर यह केस स्टडी आधारित है।

केस स्टडी के माध्यम से यह लेख कई तरह से रेखांकित करता है कि इन तमाम परिस्थितियों में शिक्षा क्या कर सकती है जिससे संवाद की संस्कृति निर्मित हो पाए। मसलन,

- अपनी बात को सही तरीक़े से रख पाना;
- दूसरे की बात को ग़ौर से सुनना; और
- एक दूसरे के प्रति सम्मान करना चाहे विरोधी ही क्यों न हों।

लेखक ने इस बात को स्थापित किया है कि विरोध से निपटने के लिए अर्थपूर्ण, तार्किक और शान्तिपूर्ण तरीक़े से संवाद किया जाना चाहिए क्योंकि यही वो ज़रिया है जिससे सार्थक तरीक़े से किसी निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है।

आलोक सिंह राठोर, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, जयपुर, राजस्थान

इस लेख के माध्यम से लेखक ने एक स्वस्थ संवाद के महत्त्व एवं दिशा पर प्रकाश डाला है। वर्तमान सन्दर्भों में बेहद महत्त्वपूर्ण यह लेख मानवशास्त्र एवं समाजशास्त्र के बीच एक संवेदनशील रिश्ते की समझ पर बात करता है। वास्तविकता है कि समाज, परिवार एवं संस्था में एक से अधिक लोगों के मतों में फ़र्क़ या फिर टकराव होता है। अमन मदान ने एक शोध द्वारा बताया है कि किशोर वर्ग किस प्रकार इन टकराव एवं संघर्षों का निपटान करता है। इसमें किशोरों ने स्वयं को समझाना, पीछे हटना, झुक जाना, दूसरे को विवश करना, हिंसा, तीसरे पक्ष को शामिल करना जैसे समाधानों को अपनाया था जो टकराव एवं संघर्षों का सुखद अन्त नहीं है। वे कहते हैं कि स्कूली शिक्षण का धर्म है कि हम बच्चों एवं युवकों को विवेकशील तरीक़ों से अपनी बात रखने एवं दूसरे का पक्ष सुनने के प्रति संवेदनशील बनाएँ, जिससे एक स्वस्थ संवाद का जन्म हो। इस मूल्य को सामाजिक विज्ञान, साहित्य, कला, खेलकूद व अन्य विषयों के माध्यम से सिखाने की अपार सम्भावनाएँ हैं, जिनको तलाशना एवं बच्चों में तराशना शिक्षक का धर्म है।

सरोजनी रावत, सहायक अध्यापक, राजकीय प्राथमिक विद्यालय खारास्रोत, नरेन्द्रनगर, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड

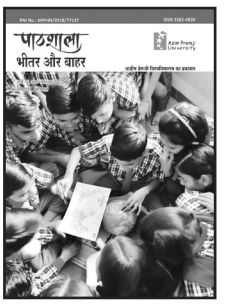

यह लेख बेहद संवेदनशील विषय पर विमर्श कर लिखा गया है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहने के लिए नियम-क़ायदे नियत हैं और समयानुसार बदलते भी रहते हैं, क्योंकि निरन्तरता के बहाव में कुछ पुराना तो कुछ नया सतत चलता रहता है। सभी मनुष्य आपसी रिश्तों को सँजोए रखने के लिए संवाद का सहारा लेते हैं। संवाद की परिपाटी तभी से चली आ रही है जब से भाषा का निर्माण हुआ है, परन्तु जब मनुष्य अपने आवेगों पर नियंत्रण नहीं रख पाता तब यह उग्र रूप में सामने आता है। इसका परिणाम क्रोध के साथ-साथ व्यवहार-जनित सीमाओं को भी पार कर जाता है। ऐसे में संवाद की स्थिति ख़त्म होने लगती है। एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति तक अपनी बात सम्प्रेषित करके किसी भी समस्या का उपचार करना चाहिए और संयमपूर्वक व्यवहार करना चाहिए। लेखक द्वारा युवकों व किशोरों से इस विषय में की गई बातचीत दर्शाती है कि वे अपने बड़ों की आज्ञा के पालनार्थ अपना पक्ष पूरी ईमानदारी से नहीं रखते हैं और किशोरियाँ तो और चार क़दम आगे जाकर उन निर्णयों को बिना किसी हील-हुज्जत के स्वीकार कर लेती हैं, जो बड़े-बुज़ुर्ग कर लेते हैं। लेखक कहते हैं कि विरोध, टकराव और संघर्ष क्योंकि हर जगह हैं तो फिर संवाद स्थापित करने के मापदण्ड भी निश्चित होने पर ही हम अपनी बात रख पाएँ, यह सम्भव नहीं लगता। जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त संवाद हमें एक दूसरे से जोड़े रखते हैं, परन्तु सामंजस्य, अर्थात अनुकूल या प्रतिकूल बात को रखते हुए हम उचित रूप में संवाद किस प्रकार करें, बहुत महत्त्वपूर्ण होता है।

परिवार प्रथम पाठशाला है और यहाँ से ही हम संवाद की प्रक्रिया से गुज़रते हैं। ऐसे में हमारी परम्पराएँ भी हमें अपनी बात रखने और कुछ भी विरोधाभास होने पर बड़ों की कही बातों को ही सर्वोपरि रखती हैं, और यही बात इस लेख में किए गए संवाद से भी चरितार्थ हो रही है। वर्तमान समय में किशोर अधिक मुखर हुए हैं, पर फिर भी बड़ों द्वारा कही गई बात या किसी झगड़े पर दिए फ़ैसले को मानने के लिए हम कभी दबाव में तो कभी स्वतः स्वीकार्यता दे ही देते हैं। भारतीय सामाजिक व्यवस्था ही कुछ ऐसी है कि यहाँ पर अपने से छोटों से डाँटकर बात करना या अपना हुक्म सुना देना आम बात है। उसमें भी ख़ासकर महिलाओं को तो इस लायक़ भी नहीं समझा जाता कि वे किसी मसले पर अपनी राय रख सकें। हालाँकि, अब वक़्त

और शिक्षा से माहौल में तब्दीली तो आने लगी है पर फिर भी संवाद की संस्कृति अभी कोसों दूर की कौड़ी नज़र आती है।

सुशील कंवर, वरिष्ठ अध्यापक हिन्दी, जीजीएसएसएस तेलीपाड़ा, जयपुर पश्चिम, राजस्थान

अक्षांश और देशान्तर की बातें, मुकेश मालवीय, अंक 15

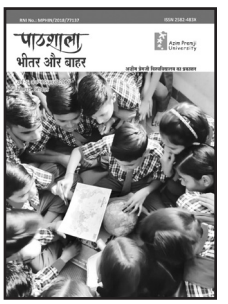

यह लेख बताता है कि किसी भी अवधारणा को बच्चों के सामने सरल और रोचक रूप में ले जाना शिक्षक के लिए चुनौती होती है। लेखक अक्षांश और देशान्तर रेखाओं की अवधारणाओं को बच्चों के बीच सरल और रोचक रूप में ले गए हैं। वे बताते हैं कि उन्होंने भी बचपन में इन अवधारणाओं को मात्र रट लिया था। यही वजह थी कि जब वे इसे लेकर बच्चों के बीच काम करने की तैयारी कर रहे थे तो ख़ुद भी कई सवालों से जूझ रहे थे।

लेख पढ़कर मेरा यह विश्वास मज़बूत हुआ कि शिक्षक को किसी भी अवधारणा पर काम करने से पहले स्वयं तैयारी करनी चाहिए। अवधारणा की समझ बनाने में बातचीत को महत्त्व देना चाहिए, बच्चों के सवालों को सम्मान के साथ शामिल करना चाहिए और यह सिलसिला निरन्तर चलते रहना चाहिए।

एक समस्या मुझे यह लगती है कि वर्तमान समय में भी शिक्षा प्रणाली परीक्षा-केन्द्रित ही है। इसमें भले ही बच्चे को अवधारणा की समझ स्पष्ट न हो, लेकिन यदि वह रटा-रटाया उत्तर लिख दे तो यह मान लिया जाता है कि वह अवधारणा समझ गया है। यदि किसी बच्चे को अवधारणा की स्पष्ट समझ है लेकिन भाषा कौशल में कमी की वजह से वह इसे लिखकर अभिव्यक्त नहीं कर पाता है, तो माना जाता है कि उसकी अवधारणा की समझ नहीं बनी है। इस समस्या से कैसे निपटा जाए, यह मुझे समझ नहीं आता।

रामेश्वर लोधी, प्राथमिक शिक्षक, सीएम राइज़ स्कूल राहतगढ़, सागर, मध्य प्रदेश

कहानी की कथा, सुमन पटेल, अंक 15

इस अंक का हर लेख कुछ-न-कुछ प्रेरणा देता है कि कैसे बच्चों के साथ बेहतर प्रयास किए जाएँ ताकि उनकी समझ विकसित हो। सुमन पटेल के लेख में बच्चों को किताब पढ़ने का चस्का कैसे लगाया जाए और वे जो भी पढ़ें उसपर उनकी अच्छी समझ कैसे बने, यह अच्छे-से समझाया गया है। किताबों पर बच्चों से बातचीत उनमें विचारों को जन्म देती है और चिन्तन के अवसर प्रदान करती है। लेख में बच्चों से कहानियों और चित्रों पर प्रश्न व बातचीत से उनकी समझ को परिपक्व करने का अच्छा प्रयास किया गया है।

इन्दु पंवार, राजकीय प्राथमिक विद्यालय गिरगाँव, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड

बच्चों के साथ कक्षा में अक्षांश–देशान्तर पर कार्य के अनुभव, विजय आनंद नौटियाल, अंक 15

बच्चों की अक्षांश-देशान्तर की समझ को विकसित करने के लिए बच्चों से बातचीत कर उनकी समझ को जाँचते हुए कार्य किया गया है। किसी स्थान की स्थिति को बताने के लिए सन्दर्भ, दिशा, दूरी की समझ बनाने से लेकर पानी की बोतलों की स्थिति को ग्रिड बनाकर दिशाओं की समझ बनाना हो, गेंद के माध्यम से पृथ्वी पर अक्षांश-देशान्तर रेखाओं की समझ बनाने के लिए वृत्त के

अन्दर रेखा खिंचवाकर समझ विकसित करना या फिर गेंद के माध्यम से पृथ्वी पर अक्षांश-देशान्तर रेखाओं की अवधरणा को स्पष्ट करना, लेखक ने इन रेखाओं को समझाने का पूरा प्रयास किया है। इस लेख के माध्यम से शिक्षकों को छात्रों की समझ बनाने में मदद मिलेगी।

अनीता ध्यानी, राजकीय प्राथमिक विद्यालय देवराना, यमकेश्वर, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड

अक्षांश-देशान्तर रेखाओं पर आधारित इस लेख में, लेखक बच्चों के परिवेश और उनके स्तर की समझ को ध्यान में रखकर प्रश्न कर रहे थे जिससे बच्चे स्वयं सरलता से जटिल अवधारणा की समझ की ओर बढ़ रहे थे। लेख में 'दिशाओं में स्थानीयता व ग्लोबलता' का आपसी तालमेल बख़ूबी देखने को मिला। मैंने सीखा कि किसी भी अवधारणा पर काम करने से पहले स्वयं की तैयारी होना बहुत ज़रूरी है। अक्षांश-देशान्तर रेखाओं को समझने में गणित की थोड़ी समझ के साथ शब्दावली (स्थिति निर्धारण में सन्दर्भ, दिशा और दूरी की अहमियत) को भी समझना होता है। अपने प्रश्न को कई बार अलग-अलग ढंग से दोहराना होगा ताकि बच्चे रोचकता के साथ अपनी समझ को कुरेद पाएँ, उत्तर पाने की प्रक्रिया में जूझ पाएँ और आगे बढ़ पाएँ। साथ ही बच्चों को अपनी बात रखने के पर्याप्त मौक़े देने होंगे।

अजय सैनी, रिसोर्स पर्सन, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, टीएलसी खुरई, सागर, मध्य प्रदेश

पुस्तक चर्चा : हमारे समय में श्रम की गरिमा, शाह आलम

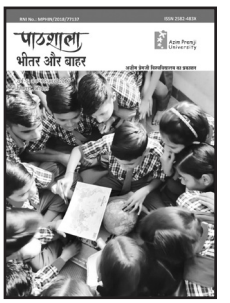

इस आलेख में लेखक ने कांचा आइलैया की पुस्तक *हमारे समय में श्रम की गरिमा* की चर्चा की है। लेखक उन व्यवसायों की महत्ता के बारे में विस्तार से चर्चा करते हैं जिन्हें कमतर आँका जाता है। आलेख बताता है कि किसानों का अर्थव्यवस्था में योगदान तो काफ़ी है पर स्थिति दयनीय है और आज भी वे आत्महत्या करने के लिए मजबूर होते हैं। इसके साथ ही, कुम्हार जाति के लोगों द्वारा बनाई गई कलाकृतियों, उनके विज्ञान कौशल और कला को नज़रअन्दाज़ कर दिया गया। बुनकरों ने चरखे और करघे का आविष्कार किया जो गाँधीजी के स्वदेशी आन्दोलन का मुख्य घटक था। कपड़ा बनाने के लिए घूमने वाले चक्के पर आधारित जो तरीक़ा उन्होंने ईजाद किया उसी का उपयोग बाँधों और परमाणु संयंत्रों में टरबाइन चलाने के लिए किया जाता है। धोबी जाति ने शुरुआती दौर में कपड़े धोने के रसायन की खोज की और इस जाति में लैंगिक समानता के उदाहरण आज भी मौजूद हैं। नाई जाति के लोगों का बाल काटने के साथ-साथ शल्य चिकित्सा, युद्ध के घायलों के उपचार, बीमारियों से पीड़ित लोगों की देखभाल और इस जाति की महिलाओं का गाँव में दाइयों की भूमिका में प्रसव का काम करवाने से सम्बन्ध है। जाति और वर्ण व्यवस्था पर कटाक्ष करते हुए लेख इस बात पर भी सवाल उठाता है कि जाति-आधारित पेशे जन्मजात कैसे हो गए। इस आलेख में लैंगिक समाजीकरण का ज़िक्र भी है जिसमें महिलाओं और पुरुषों में काम के समान बँटवारे की अपेक्षा की जाती है। किताब के लेखक कांचा आइलैया ने महत्त्वपूर्ण, रोचक व पठनीय रूप में इतिहास, विज्ञान व सामाजिक विज्ञान के अनेक प्रसंगों को समाहित किया है।

इस किताब के लेखक टिप्पणी करते हैं कि "ईश्वर और धर्म के नाम पर श्रम का तिरस्कार करना वे लोग सीखते हैं जो दूसरों का शोषण करके अपना जीवन चलाते रहना चाहते हैं।"

राम सिंह, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, टीएलसी कर्णप्रयाग, चमोली, उत्तराखंड

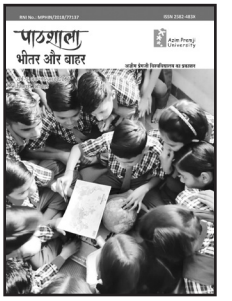

'साक्षात्कार' को पढ़ते समय मैंने जाना कि किस तरह से पुस्तकों के साथ अनेक प्रयोग किए जा सकते हैं और बच्चों में पढ़ने की आदतें डालने के लिए हमें किस तरह से काम करना चाहिए। बच्चों के लिए एक अच्छा वातावरण तैयार करना बहुत ज़रूरी होता है। जब बच्चे किताबों को पढ़ना सीख जाते हैं तो उन्हें लेखन सम्बन्धी समस्याएँ भी कम आती हैं और वे अपनी बातों को भी रख सकते हैं। बच्चों को किताबी पढ़ाई से नए शब्द समझ आने लगते हैं और उनका शब्दकोश भी समृद्ध होने लगता है। पूनम भाटिया की बातचीत से समझ में आया कि हमें ख़ुद ही पहल करनी होगी। इससे ही बच्चे भी जागरूक होते हैं और अपने कार्यों को संजीदगी से लेते हैं। रजिस्टर बनाने की प्रक्रिया व इसमें स्वयं ही कार्य करने देने की स्वतंत्रता बहुत महत्त्वपूर्ण लगी।

गायत्री गुप्ता, राजकीय प्राथमिक विद्यालय, कैलगिरी कच्ची बस्ती, मालवीय नगर, जयपुर, राजस्थान

पाठशाला भीतर और बाहर के अंक 15 में विविधता लिए कई आलेख हैं। इन्हें पढ़ना, पढ़कर एक समझ विकसित करना, अनुभवों व प्रयोगों को कक्षा-कक्षीय शिक्षण में उपयोगी बनाना, अपने-आप में उल्लेखनीय कार्य है। इस पत्रिका की बहुत-सी बातें अनुकरणीय होती हैं। मैं *पाठशाला* की नियमित पाठक हूँ और इन आलेखों से मुझे शिक्षण हेतु वातावरण निर्मित करने में सहायता मिलती है। इस अंक में अक्षांश व देशान्तर को पढ़ने के बाद यह महसूस हुआ कि किस तरह से हम अक्षांश और देशान्तर वाले लेखों को और अच्छे-से समझा सकते हैं व किन विधियों से उनपर काम कर सकते हैं। बच्चों के साथ शिक्षण कार्य करवाते हुए आने वाली परेशानियों में नियमित रूप से मिलने वाली यह पत्रिका हमें काफ़ी रास्ते सुझाती है। इसमें आए हुए विचार, भाव, अवधारणाएँ, हमें आगे बढ़ने में मदद करते हैं। पत्रिका में दिए गए आलेख व चित्र हमें कंटेंट को समझने में मदद करते हैं। मैं अन्य अध्यापकों से भी इसके आलेखों के विषय में चर्चा करती रहती हूँ। सामाजिक विज्ञान की शिक्षिका होने के नाते यह पत्रिका कक्षा 6 से 8 में पढ़ाने के लिए अत्यन्त उपयोगी रहती है। इसमें दिए गए संवाद एवं साक्षात्कार भी काफ़ी उपयोगी और प्रेरक होते हैं और मैं भी अपने शिक्षण में गुणवत्तापूर्ण सुधार करने का लगातार प्रयास एवं आगे बढ़ने की कोशिश करती हूँ। मुझे *पाठशाला* के अंकों का हमेशा इन्तज़ार रहता है।

प्रमिला भाटी, राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय बम्बाला, सांगानेर, जयपुर, राजस्थान

लेखकों से आग्रह

पाठकों से प्राप्त सुझाव के आधार पर **पाठशाला भीतर और बाहर** में छपने वाले लेखों की प्रकृति, स्वरूप और प्रस्तुति में कुछ परिवर्तन किए गए हैं। प्रयास है कि पत्रिका ज़मीनी स्तर पर काम कर रहे साथियों के लिए अपने अनुभवों को दर्ज करने, उनको विस्तार और गहराई देने के लिए एक उपयुक्त मंच बने और साथ ही इन अनुभवों को साझा करने का भी। इसी तरह, यह ज़मीनी स्तर पर होने वाले कार्य की दृष्टि से अर्थपूर्ण व कार्य में मददगार भी बन पाएगी। और व्यापक पाठक वर्ग सहित आप व हमारे शिक्षक साथी इसे पढ़ेंगे और इसका अधिकाधिक उपयोग कर पाएँगे।

आपसे आग्रह है कि आप अनुभवों को दर्ज कर पत्रिका में छपने के लिए भेजें। आप स्कूल में, कक्षा में, और अलग–अलग मंचों पर शिक्षकों के साथ किए गए काम के अनुभवों को भेज सकते हैं। आपके साथी शिक्षक भी अपने काम के अनुभवों को भेज सकते हैं। आपके द्वारा भेजे गए लेख बच्चों के सीखने–सिखाने से सम्बन्धित हो सकते हैं, जैसे– विभिन्न विषयों या प्रकरणों को सीखने–सिखाने के अनुभव या फिर शिक्षकों के साथ अन्तर्क्रिया के नए तौर–तरीक़ों पर केन्द्रित या फिर किसी महत्त्वपूर्ण या उल्लेखनीय संवाद के बारे में जो औरों के लिए भी उपयोगी हो। इनके और बहुत–से उदाहरण हो सकते हैं। जैसे– बच्चों के साथ काम के सन्दर्भ में गणित, विज्ञान, भाषा, सामाजिक अध्ययन, आदि किसी भी विषय की किसी भी कक्षा के अनुभव। ये अनुभव किसी अवधारणा को बच्चों को सिखाने, उन्हें गतिविधियाँ कराने या उनके साथ खेल खेलने आदि के हो सकते हैं।

आप, स्कूल और शिक्षकों के साथ (इसमें एंगेज्ड शिक्षक भी शामिल हैं) जो काम कर रहे हैं, उससे सम्बन्धित लेख भी साझा कर सकते हैं। इसमें आपने जो किया उसके साथ–साथ आप अपने काम में किस ख़ास तरह से आगे बढ़े और वह आपने क्या सोचकर किया, इस विचार को शामिल कर सकते हैं। इस दौरान आप अपने काम के सकारात्मक नतीजे व उसमें दिखने वाले गैप भी बताएँ, जैसे– बाल सभा या बाल शोध मेलों में कुछ परिवर्तन किया, तो वह क्या सोचकर किया, उसका क्या नतीजा निकला और बेहतर करने के लिए उसमें और क्या–क्या किया जा सकता है, आदि। इसी तरह, कक्षा में बच्चों को चित्रकला करवाने, कहानी सुनाने या किसी नाटक में भाग लिया, तो उसके बारे में क्या अनुभव रहे, यह बता सकते हैं। गणित का एक उदाहरण शिक्षण सामग्री जैसे– गिनमाला का प्रयोग करके गिनती सिखाने का हो सकता है। इसी तरह वालंटरी टीचर फ़ोरम, टीचर लर्निंग सेंटर, समर–विंटर कैम्प के शैक्षिक प्रयासों आदि के बारे में भी मननशील लेख हो सकते हैं। ये लेख पाठक को यह समझने में मदद करें कि उनमें क्या प्रयास था, किस परिस्थिति में उन्हें सोचा गया, कैसे किया गया, क्या हो पाया, क्या कमी रही, क्या सीखा और आगे के लिए आपके समूह और पाठकों के लिए उसके क्या निहितार्थ हैं?

शिक्षकों के साथ प्रशिक्षण के दौरान, वालंटरी टीचर फ़ोरम में कार्य के दौरान, टीचर लर्निंग सेंटर पर हो रहे प्रयासों में, या उनके साथ सहकारी शिक्षण के दौरान हुए अनुभवों को मननशील व समालोचनात्मक दृष्टिकोण से लिखकर भेजें तो अच्छा रहेगा। इसी तरह, बच्चों अथवा शिक्षकों के साथ कक्षा के बाहर हुए सार्थक अनुभव भी आप मननशील ढंग से लिख सकते हैं।

लेखों के विषय और विषयवस्तु ऐसी हो जिससे फ़ील्ड में कार्य करने वाले साथियों और शिक्षकों को वैचारिक मदद मिलती हो और उनका दक्षता संवर्धन होता हो। लेख ऐसे हों जो स्कूल व कक्षा में पढ़ने–पढ़ाने के तरीक़ों व अन्य गतिविधियों में शिक्षकों व फ़ाउण्डेशन के साथियों द्वारा इस्तेमाल किए जा सकें। साथ ही, ऐसे लेख भी हों जिनसे विविध विषयों एवं उनमें बुनी अवधारणाओं को पढ़ाने

में मदद मिले और उनकी भाषा व विषय सामग्री अधिक–से–अधिक सदस्यों को आसानी से समझ में आने वाली हो।

यदि लेख में दिए गए किसी विवरण, चर्चा अथवा व्याख्या से सम्बन्धित किसी तर्क अथवा प्रमाण के लिए किसी पुस्तक, जरनल या वेब स्रोत से कोई सामग्री ली गई हो तो उसका उल्लेख ज़रूर करें। आप जो भी सन्दर्भ सामग्री लें उससे लेख को अर्थपूर्ण, तार्किक और गुणवत्तापूर्ण बनाने में मदद मिले।

इसके अलावा, आप शिक्षा से सम्बन्धित किसी पुस्तक, फ़िल्म अथवा अन्य शिक्षण सामग्री के बारे में भी लिख सकते हैं, मसलन उनका परिचय, समीक्षा अथवा विश्लेषण।

आशा करते हैं कि आपके यह लेखकीय अनुभव ठोस एवं यथार्थपरक होंगे। उनमें कुछ ऐसा ज़रूर हो जो पाठक को रुचिपूर्ण व सार्थक लगे।

लेखकों को अपने लेखन के सन्दर्भ में किसी भी तरह के सहयोग की आवश्यकता महसूस होती है तो वे इसके लिए सम्पर्क कर सकते हैं। उन्हें सम्पादक मण्डल के सदस्यों द्वारा आवश्यक सहयोग और सुझाव दिए जाएँगे। उम्मीद है कि **पाठशाला भीतर और बाहर** का यह सोलहवाँ अंक आपको अच्छा लगेगा और आप इसके अगले अंकों के लिए ज़रूर लिखेंगे। पत्रिका के इस अंक पर आपकी टिप्पणियों व सुझावों का हमें हमेशा की तरह इन्तज़ार रहेगा।

मुद्रक तथा प्रकाशक मनोज पी. द्वारा अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन फॉर डिवलपमेंट के लिए अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, प्लॉट नं. 163–164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव सोसाइटी, E–8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा भोपाल, मध्यप्रदेश 462039 की ओर से प्रकाशित एवं गणेश ग्राफ़िक्स, 26–बी, देशबंधु परिसर, प्रेस काम्प्लेक्स, एम.पी. नगर, जोन–1 भोपाल द्वारा मुद्रित।

सम्पादक : गुरबचन सिंह